बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 79

## मोदी को बढ़त

**भारत** जैसे जटिल राजनीतिक परिदृश्य में एक्जिट पोल पर भरोसा करना ठीक नहीं। उनके प्रादर्श में अक्सर दिक्कत रहती है जो मत हिस्सेदारी से लेकर सीटों तक में नजर आती है।

बीते चार आम चुनावों में से दो में एक्जिट पोल सटीक नहीं रहे हैं। दुनिया में अन्य स्थानों पर चुनाव तब तक खत्म नहीं होते जब तक आखिरी वोट न गिन लिया जाए। कई बार दर्जनों एक्जिट पोल गलत होते हैं। ऑस्ट्रेलिया में सत्ताधारी सरकार की चौंकाने वाली जीत ने तमाम पूर्वानुमानों को झुठलाकर यह दिखाया।

उस दृष्टि से देखें तो सभी एक्जिट पोल एक खास दायरे में रहते हैं। 2019 के आम चुनाव का मामला भी अलग नहीं है। मतदान समाप्त होने के बाद एक्जिट पोल के नतीजे जारी कर दिए गए हैं। संभावना यही है कि ये एक खास ढर्रे पर आधारित हैं। बहरहाल इन एक्जिट पोल की सटीकता पर सवाल होते हुए भी निष्कर्ष यही है कि राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन लोकसभा में आराम से बहुमत हासिल कर लेगा।

अगर ऐसा होता है तो कई नतीजे निकाले जा सकते हैं। पहली बात, राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के विधानसभा चुनाव आम चुनाव के सही संकेतक नहीं रहे और आम चुनाव में राष्ट्रवाद एक बड़ा कारक बनकर उभरा। इसके अलावा प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की लोकप्रियता उन राज्यों में भी पार्टी को जिताने में सक्षम है जहां स्थानीय नेता या सरकारें अलोकप्रिय रहे। कई लोगों ने अनुमान लगाया था कि मोदी के नाम पर वोट मांगे जाने पर अंतर आएगा और एक्जिट पोल सुझाते हैं कि ऐसा हुआ है। राष्ट्रहित से जुड़े निर्णय लेने में सक्षम नेता के रूप में मोदी की छवि संभवत: कांग्रेस की राजनीति पर भारी पड़ी है।

कांग्रेस की चुनावी नीतियां समाज के असंतुष्ट धड़ों पर ध्यान केंद्रित करने वाली रहीं। परंतु तथ्य यह है कि राहुल गांधी भले ही एक राजनेता के रूप में बहुत अधिक बेहतर हुए हों लेकिन अभी भी उनका कद ऐसा नहीं है कि वह मोदी की लोकप्रियता को गंभीर चुनौती दे पाएं।

एक्जिट पोल के आंकड़ों के मुताबिक कांग्रेस का प्रदर्शन 2014 की स्तब्ध कर देने वाली हार से कुछ बेहतर रहेगा लेकिन अभी भी वह भाजपा से बहुत पीछे रहेगी। इस पुराने राजनीतिक दल को अपने नेतृत्व की कमियों को लेकर गहरा आत्मावलोकन करना होगा।

अगर पोल सही हैं और राजग दोबारा आसानी से जीतता है तो मोदी को जीत से मिलने वाली इस राजनीतिक पूंजी का इस्तेमाल लंबे समय से रुके आर्थिक सुधारों में करना चाहिए। मोदी तेज आर्थिक वृद्धि और रोजगार सृजन का वादा कर सत्ता में आए थे। वह आर्थिक मंदी और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के संकट की वजह से दोबारा चुने जाने की मुश्किल लड़ाई लड़ रहे हैं। अब आम चुनाव खत्म हो चुके हैं, इसलिए आगे कुछ राजकोषीय मितव्ययिता बरतना और भारतीय अर्थव्यवस्था को प्रभावित कर रहे बुनियादी तथा चक्रीय कारकों को हल करना जरूरी होगा। राजग के प्रदर्शन को मजबूत बनाने का समय पूरा हो चुका है, इसलिए यह मोदी के 2022 के बेहतर समाज के लक्ष्य को पूरा करने के लिए आवश्यक काम की अहमियत को समझने का उपयुक्त समय होगा। इसके लिए श्रम एवं रोजगार समेत बहुत से कानूनों में त्वरित बदलावों की जरूरत होगी।

सरकार को यह सुनिश्चित करना होगा कि विनिर्माताओं और निर्यातकों के सामने आ रही मौजूदा दिक्कतों को खत्म किया जाए। उसे शिक्षा और कौशल पर ध्यान देना होगा। उम्मीद है कि राजनीति हो चुकी है, इसलिए आगे सभी काम आर्थिक मोर्चे पर किए जाएं।

# प्रज्ञा ठाकुर की जीत के क्या होंगे मानी ?

ऐसा कभी नहीं हुआ कि किसी एक वर्ग ने भारतीय राष्ट्रवाद पर इस तरह अपने अधिकार का दावा किया हो और साथ ही गांधी की नीतियों पर चलने का छद्म भी रचा हो। ऐसे में अगर प्रधानमंत्री मोदी प्रज्ञा ठाकुर को अपने हृदय में माफ नहीं भी करते तो क्या फर्क पड़ जाएगा।

बिनय सिन्हा

चुनाव की बात

शेखर गुप्ता

यकीनन 'साध्वी' प्रज्ञा सिंह ने एक उपलब्धि तो हासिल कर ली है। उन्होंने नरेंद्र मोदी और अमित शाह को रक्षात्मक रुख अपनाने पर मजबूर कर दिया है। ऐसा उनके अलावा कोई और नहीं कर सका है। उन्होंने एक और ऐसा काम किया जिससे उनके पार्टी नेतृत्व को नफरत है। प्रज्ञा ने पार्टी नेतृत्व से सुर्खियां तय करने की ताकत भी छीन ली है। लगातार पांच वर्ष तक सुर्खियां तय करने और उन पर नियंत्रण रखने की शानदार नीति के बाद भाजपा का अभियान जिस तरह समाप्त हुआ, पार्टी वैसा चाहती तो नहीं होगी। सार्वजनिक जीवन में मोदी और शाह के सामने पहली बार ऐसा मसला था जिसका बचाव करना मुश्किल था।

केंद्रीय मंत्री अनंत कुमार हेगड़े और आईटी सेल प्रमुख अमित मालवीय समेत कुछ ट्विटर प्रेमी उनके बचाव में कूदे और उन्होंने गांधी बनाम गोडसे की बहस को आगे ले जाने की कोशिश की। इन सबको चुप करा दिया गया। बीते पांच वर्षों ने हमें दिखाया है कि भाजपा, अपनी पार्टी के किसी भी व्यक्ति द्वारा किसी अन्य व्यक्ति या समुदाय के बारे में कही गई खराब से खराब बात का बचाव कर सकती है। याद कीजिए 'अली बनाम बजरंग बली', 'ईद पर बिजली हो तो दीवाली पर क्यों नहीं', 'मोदी की सेना', 'अवैध प्रवासी दीमक हैं' या राहुल को 'पप्पू' और प्रियंका गांधी को 'पप्पी' कहना।

परंतु महात्मा गांधी के बारे में ऐसा करने की सोचना भी नहीं चाहिए। कुछ लोग गोष्ठियों और शाखाओं में उनकी गलतियों के बारे में फुसफुसाते होंगे, उन्हें विभाजन का उत्तरदायी बताते होंगे लेकिन सार्वजनिक रूप से कभी नहीं। बीते सात दशक अपने वैचारिक अभिभावक आरएसएस को उनकी हत्या के आरोप से दूर रखने के प्रयास के बाद तो कतई नहीं।

भाजपा ने इस भगवाधारी हिंदुत्व आइकॉन को जो कि आतंकवाद के मामले में जमानत पर बाहर है, यह दलील देते हुए चुनाव मैदान में उतारा कि जब तक कोई दोषी सिद्ध न हो, निर्दोष है। उनके मुताबिक महात्मा गांधी का हत्यारा देशभक्त है। आप जिसे राष्ट्रपिता कहते हैं उसकी विरासत को चुनौती कैसे दे सकते हैं? खासकर उनकी 150वीं वर्षगांठ वाले वर्ष में। प्रधानमंत्री खुद विदेशी राजनेताओं को महात्मा गांधी से जुड़े स्थानों तक ले जाने में गौरव महसूस करते हैं। दक्षिण अफ्रीका के जिस पीटरमारिट्जबर्ग स्टेशन पर गांधी को ट्रेन से जबरन उतारा गया था, वहां ट्रेन यात्रा कर चुके हैं, उन्होंने दांडी यात्रा की 89वीं वर्षगांठ पर ब्लॉग लिखा, चंपारण सत्याग्रह की शताब्दी पर वहां पहुंचे, साबरमती में गांधी आश्रम में चरखा चलाते हुए तस्वीर खिंचाई और गांधी के गोल चश्मे को स्वच्छ भारत अभियान का लोगो बनाया।

प्रज्ञा ठाकुर न तो वोट जुटा सकती हैं और न ही पार्टी की नीतिगत स्थिति में उनका कोई दखल है, उन्होंने प्रधानमंत्री और अपने पार्टी प्रमुख को जबरदस्त झटका दिया है। वे शिकायत भी नहीं कर सकते क्योंकि उन्हें गुमनामी से खींचकर तो वही लाए हैं।

मोदी के साथ संवाददाता सम्मेलन में शाह ने कहा कि कांग्रेस ने भगवा आतंकवाद का जुमला छेड़कर हिंदुओं को बदनाम करने का प्रयास किया और उनकी पार्टी का प्रज्ञा को उतारना कांग्रेस के खिलाफ 'सत्याग्रह' था।

यहां दो बातों पर ध्यान दें। पहली बात, पार्टी अब स्वयं को साध्वी प्रज्ञा से दूर नहीं कर सकती। वजह एकदम साफ है, उसने उन्हें जानबूझकर चुना था ताकि वे अपनी बात प्रमुखता से रख सकें। दूसरा, यह विडंबना ही थी कि अपने राजनीतिक वक्तव्य को स्पष्ट करने के लिए शाह को गांधी की पहचान रहे 'सत्याग्रह' शब्द का इस्तेमाल करना पड़ा। जब आप गांधी के अहिंसा के विचार का इस्तेमाल उनके हत्यारे को देशभक्त करार देने वाले व्यक्ति के बचाव के लिए इस्तेमाल करते हैं तो आप समझ जाइए कि आप कहां खड़े हैं।

जीवन होया राजनीति, एक सिद्धांत यह है कि सही वजह होने पर भी कभी गलत काम नहीं करना चाहिए। हमें पता है कि भाजपा दिग्विजय सिंह से हिसाब बराबर करना चाहती थी। 'हिंदू आतंकवाद' को लेकर कांग्रेस में सबसे मुखर वही रहे हैं। उन्होंने तो नई दिल्ली के बटला हाउस में हुई मुठभेड़ और वहां शहीद हुए पुलिस अधिकारी मोहन चंद्र शर्मा की शहादत पर भी सवाल उठा दिए थे। शर्मा को भी हेमंत करकरे की तरह मरणोपरांत अशोक चक्र से सम्मानित किया गया। 26/11 को आरएसएस का षडयंत्र बताने वाली एक किताब की रिलीज पर भी उन्होंने ऐसी ही बात कही।

भाजपा का मानना था कि उनके सामने हिंदू आतंकवाद के आरोप में गिरफ्तार लोगों में से सबसे कट्टर चेहरे को उतारा जाए। पिछले महीने के आखिर में प्रज्ञा ठाकुर ने हेमंत करकरे की बुराई की और दावा किया कि वह उनके शाप से मरे हैं और उनका परिवार बरबाद हुआ है (याद रहे करकरे के निधन के छह वर्ष बाद 29 सितंबर को उनकी पत्नी का भी निधन हो गया था। यह तारीख मालेगांव धमाकों की बरसी भी है)। उन्होंने बहादुरी बताते हुए कहा कि वह बाबरी मस्जिद के गुंबद पर चढ़ीं और उसे ढहाया। इसके बाद से पार्टी ने नुकसान कम करने की कोशिश की। पहले उनको मौन व्रत पर भेजा गया और भाजपा ने दिग्विजय और कांग्रेस पर आरोप लगाया कि उन्होंने भी मोहन चंद्र शर्मा का यूं ही अपमान किया था। परंतु गोडसे की तारीफ ने पार्टी के पास छिपने की जगह नहीं छोड़ी है।

सन 1989 से भाजपा की नीति रही है, धीरे-धीरे आक्रामक होना। इसकी शुरुआत लालकृष्ण आडवाणी के अयोध्या आंदोलन के साथ हुई। इर्दगिर्द के चरमपंथी तत्त्वों को निरंतर बढ़ावा दिया जाता रहा। इस बीच कुछ को खारिज भी किया गया, मसलन साध्वी ऋतंभरा, प्रवीण तोगड़िया और यहां तक कि विनय कटियार। जबकि उमा भारती और साक्षी महाराज, साध्वी निरंजन ज्योति (रामजादे और हरामजादे वाला बयान) तथा योगी आदित्यनाथ जैसे लोग मुख्यधारा में भी आए।

यह नीति तीन दशक तक कारगर रही लेकिन इसका अंत होना ही था। हममें से कुछ लोगों को इसका अंदाजा हो गया था। दादरी में गोरक्षकों द्वारा अखलाक की हत्या के बाद मैंने इसी स्तंभ में ऐसा कह दिया था। प्रज्ञा उस कड़ी का सबसे ताजा और शर्मिंदा करने वाला उदाहरण हैं। इसे गलती भी नहीं कहा जा सकता क्योंकि पार्टी अध्यक्ष अमित शाह ने खुद हमें बताया कि यह सोच समझकर उठाया गया कदम था, सत्याग्रह था। यह मूर्खतापूर्ण बयान था जिसने उनके इरादे स्पष्ट किए। यह जीत के अतिआत्मविश्वास और राष्ट्रवाद की गलत समझ से उपजा था।

यह मान्यता इस बात से उपजी है कि हिंदुत्व ने ही भारत को एकजुट रखा है। वह हिंदुत्व को आरएसएस की हिंदी प्रदेश की दृष्टि से जोड़कर भी देखती है। एक आस्था, एक कौम, एक भाषा और एक राष्ट्र। भारत ऐसा नहीं है। वह अत्यंत विविधतापूर्ण देश है। मोदी को याद रखना चाहिए कि अगर वह पूर्ण बहुमत पा जाते हैं तो भी दक्षिण के चार राज्य आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, तमिलनाडु और केरल में भाजपा को 103 में से शायद दो सीट भी मुश्किल से मिलें। ऐसे तमाम प्रदेशों में इस हिंदूकरण को लेकर विरोध उत्पन्न होगा। हिंदूकरण की यह सोच हमारे पुरखों की सोच से उलट है जिन्होंने राज्यों का एक संघ बनाया और भारत खूबसूरती से एकजुट रहा। यही नहीं वह दशक दर दशक अधिक मजबूत और सुरक्षित होता गया। जबकि वैचारिक आधार पर गठित पड़ोसी देश पाकिस्तान बिखर गया।

विविधता को लेकर हमारी सहजता आधुनिक विश्व को हमारा तोहफा है। ऐसे समय में जबकि अलग- अलग संस्कृतियों का साथ रहना मुश्किल है, वहां यह एक बड़ी खूबी है। ऐसे में अगर भारत दुनिया में विविधता का सबसे बड़ा ब्रांड है तो स्विस दार्शनिक कार्ल जंग के शब्दों में महात्मा गांधी इस ब्रांड का सबसे बड़ा प्रतीक हैं।

नेहरू को गाली देना, उनसे असहमत होना आसान है। कुछ लोग इंदिरा और राजीव गांधी के हत्यारों को पहले ही नायक मानते हैं। जो चरम हिंदू दक्षिणपंथी महात्मा गांधी को मुस्लिम तुष्टीकरण की राजनीति का संस्थापक मानते हैं, उनके लिए भी गांधी को निशाना बनाना आत्मघाती है। मोदी का यह कथन ईमानदार हो सकता है कि वह प्रज्ञा को कभी माफ नहीं करेंगे। उनको यह प्रार्थना भी करनी चाहिए कि गुरुवार को आ रहे चुनाव नतीजों में उनकी जीत न हो। अगर वह जीतीं तो पांच साल तक गांधी के नाम पर शासन चलाने वाले दल को संसद में एक ऐसे सदस्य की मौजूदगी की शर्मिंदगी उठानी होगी जो गांधी के हत्यारे को देशभक्त बताती है।

# चुनावी नतीजों से तय होगी बाजार की आगे की चाल

बाजार संकेतक

देवांग्शु दत्ता

**आम** चुनावों के नतीजे इस हफ्ते घोषित हो जाएंगे। पहले हमने नई सरकार आने पर कारोबार संबंधी सीमित अवधि के कुछ विचारों पर गौर किया था। पुराने आंकड़ों और आख्यानों से लगता है कि खंडित जनादेश होने की स्थिति में खासी अनिश्चितता का माहौल रह सकता है। बाजार के लिहाज से इसका मतलब कई महीनों की उठापटक हो सकता है। पिछले हफ्ते मैंने इस अनुमान के आधार पर सूचकांकों का जिक्र किया था कि निफ्टी (और निफ्टी बैंक सूचकांक) में 30 मई तक 5 फीसदी या अधिक का बदलाव हो सकता है। इस संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है कि बाजार में उतार-चढ़ाव का दौर जून में भी जारी रह सकता है, खासकर कई दलों की मिली-जुली सरकार बनने की स्थिति में। ऐसा होने पर कारोबारी पूरे जून में पांच फीसदी या अधिक बदलाव वाले सूचकांकों में कारोबार को तरजीह दे सकते हैं।

अब हम बाजार परिदृश्य की लंबी अवधि एवं विस्तृत तस्वीर पर गौर करते हैं। आर्थिक हालात दुनिया भर में खराब हो रहे हैं और भारतीय अर्थव्यवस्था भी अपनी वृद्धि दर को बनाए रखने के लिए जद्दोजहद कर रही है। व्यापार युद्ध, ईरान के साथ अमेरिकी तनाव और ब्रेक्सिट को लेकर मची अफरातफरी जैसे कारणों से वैश्विक हालात और भी बिगड़ सकते हैं।

मसलन, बहुराष्ट्रीय कंपनियां (एमएनसी) अगर कड़े सीमा शुल्क प्रावधानों से बचने के लिए अपनी विनिर्माण गतिविधियों को चीन से हटाकर भारत में स्थानांतरित कर देती हैं तो भारत को उससे फायदा हो सकता है। अगर विदेशी पोर्टफोलियो निवेशक (एफपीआई) यह मानते हैं कि अन्य उभरते बाजारों की तुलना में भारत की वृद्धि संभावनाएं बेहतर हैं तो भी भारत को फायदा हो सकता है। लेकिन भारत में प्रतिस्पर्द्धी घरेलू विनिर्माण परिवेश का अभाव है। कंपनियों के नतीजे भी आर्थिक गतिविधियों में तेजी के खास संकेत नहीं दे रहे हैं। असल में, अगर हम हाई-स्पीड डेटा में सुस्ती और मॉनसून की उम्मीद से कम संभावनाओं पर गौर करते हैं तो हालात और भी खराब हो सकते हैं।

जो भी सरकार सत्ता में आती है उसे कुछ लोक-लुभावन मदों में व्यय करना होता है। इसका मतलब है कि हमें सार्वजनिक वित्त की स्थिति में और भी गिरावट के लिए तैयार रहना होगा। उसी के साथ सरकार को वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) की प्रक्रिया एवं कर दरों और ऋणशोधन अक्षमता एवं दिवालिया संहिता (आईबीसी) की समीक्षा के बारे में भी सोचना होगा। नई सरकार को पूरी तरह नाकाम हो चुकी डेटा संग्रहण और विस्तार की समूची प्रक्रिया में सुधार करना होगा। भाजपा सरकार को ये काम करने में हिचक होगी। यही वजह है कि गैर- भाजपा गठबंधन के ही देश की आर्थिक हालत दुरुस्त करने का काम जल्द शुरू करने के अधिक अवसर हैं।

शेयर बाजार का मूल्यांकन आर्थिक वृद्धि या मूल्य जैसे किसी भी पैमाने के आधार पर उचित ठहराए जा सकने वाले मानकों से काफी अधिक है। गत 18 महीनों में भुगतान में चूक के सभी मामलों के चलते ऋण बाजार भी डांवाडोल है। भारी राजकोषीय घाटे की भरपाई के लिए सरकारी उधारी बढ़ने से कंपनियां बॉन्ड बाजार से दरकिनार कर दी जाएंगी।

ऐसे में बाजार के धराशायी होने की उम्मीद करना समझदारी होगी और हमें उसके लिए तैयार रहना होगा। इसका यह मतलब नहीं है कि आपको अपना समूचा पोर्टफोलियो बेच देना चाहिए और इक्विटी बाजार से निकल जाना चाहिए। अगर आप शेयर चुनने में यकीन रखते हैं तो अपनी इक्विटी होल्डिंग्स पर नजर डालें और खुद से यह सवाल करें: अगर स्टॉक का बाजार मूल्य 35-50 फीसदी तक गिर जाता है तो इनमें से कितने स्टॉक आप आसानी से बनाए रखेंगे? इनमें से कितने स्टॉक अगले तीन वर्षों के लिए सुविधाजनक ढंग से रख पाएंगे?

ऐसे में जिन शेयरों में आप खुद को सहज नहीं महसूस कर रहे हैं, उन्हें बेचकर मुनाफा कमाइए और उस फंड के कुछ हिस्से को संकट के समय सबसे सुरक्षित मानी जाने वाली परिसंपत्ति सोने में निवेश कर दें। पोर्टफोलियो का बाकी हिस्सा अपने पास बनाए रखें। आप जिस स्टॉक को बनाए रखने के लिए तैयार हैं, उसके प्रति अपनी प्रतिबद्धता बढ़ा दें। अगर आपके पसंदीदा स्टॉक की कीमतें गिरती हैं तो उसके और शेयर खरीदकर औसत कीमत में कमी लाएं।

अगर आप किसी इक्विटी म्युचुअल फंड पोर्टफोलियो के प्रणालीगत निष्क्रिय निवेशक हैं तो बाजार गिरते ही आपको अपना निवेश बढ़ाने की जरूरत है। एक नजरिया तो पेशबंदी का है। अगर बाजार 10 फीसदी तक गिरता है तो आपको अपनी मासिक प्रतिबद्धता 10 फीसदी बढ़ा लें। इसी तरह बाजार के 20 फीसदी गिरने पर अपनी प्रतिबद्धता 20 फीसदी बढ़ा दें। सिद्धांत वही रहेगा। भारतीय बाजार में मंदी का वक्त काफी बुरा हो सकता है। लेकिन वह तुलनात्मक रूप से कम समय के लिए होता है। हमने ऐसे कई दौर देखे हैं जब सूचकांकों में 12 महीने के भीतर 50 फीसदी तक का नुकसान हुआ है। लेकिन शायद ही तीन साल का ऐसा दौर रहा है जब सूचकांकों ने शुद्ध बढ़त नहीं हासिल की है। अगर यह मंदी वाला बाजार है तो चक्रीय परिपाटी को भी ध्यान में रखें।

मूल्यांकन के संदर्भ में, इक्विटी के सुरक्षित निवेश बन जाने का एक बिंदु भी है। निफ्टी का औसत मूल्यांकन 18-19 दायरे के पीई अनुपात में रहा है यानी उसके माध्यिका एवं औसत मूल्य दोनों ही इस दायरे में रहे हैं। तीन फीसदी का सुधार होने के बाद अब पीई 25 से ऊपर है। अगर बाजार पीई 18 से नीचे गिरता है तो मोटे तौर पर ऊंचे स्तर से 35 फीसदी कम मूल्य होने पर सूचकांक परिसंपत्ति में भारी खरीद के लिए तैयार रहें। बाजार के फिर से तेजी पकड़ने की गारंटी है और पूरी संभावना है कि दो साल के भीतर आप 50 फीसदी प्रतिफल हासिल कर लेंगे।

## कानाफूसी

### चाय पार्टी का राज?

सोनिया गांधी ने विपक्षी दलों को आगामी 23 मई को चाय पर निमंत्रित किया। इसके पीछे क्या वजह थी? साझा मोर्चा बनाने की दिशा में ऐसी पहली पहल तेलुगू देशम पार्टी के नेता चंद्रबाबू नायडू ने की थी। उन्होंने कांग्रेस समेत तमाम गैर भाजपा दलों तक पहुंच बनाकर 21 मई को मुलाकात करने और 23 मई की नीति बनाने की बात कही। बहरहाल, तृणमूल कांग्रेस की नेता और पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने इसे लेकर कोई उत्साह नहीं दिखाया।

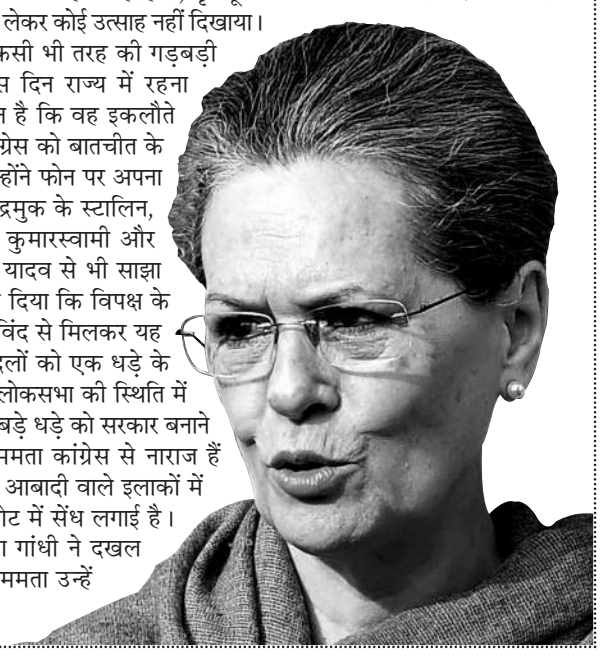

उन्होंने कहा कि मतगणना में किसी भी तरह की गड़बड़ी को रोकने के लिए उनका उस दिन राज्य में रहना आवश्यक है। नायडू को यकीन है कि वह इकलौते ऐसे शख्स हैं जो ममता और कांग्रेस को बातचीत के लिए एक साथ ला सकते हैं। उन्होंने फोन पर अपना विचार विपक्ष के अन्य नेताओं द्रमुक के स्टालिन, जनता दल सेक्युलर के एचडी कुमारस्वामी और समाजवादी पार्टी के अखिलेश यादव से भी साझा किया। नायडू ने यह सुझाव भी दिया कि विपक्ष के नेताओं को राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद से मिलकर यह मांग करनी चाहिए कि वे 22 दलों को एक धड़े के रूप में चिह्नित करें और त्रिशंकु लोकसभा की स्थिति में सबसे बड़े दल के बजाय सबसे बड़े धड़े को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करें। परंतु ममता कांग्रेस से नाराज हैं क्योंकि उसने बंगाल में मुस्लिम आबादी वाले इलाकों में प्रत्याशी खड़े कर तृणमूल के वोट में सेंध लगाई है। यही कारण है कि अब सोनिया गांधी ने दखल दिया है। उनका मानना है कि ममता उन्हें मना नहीं कर पाएंगी।

## आपका पक्ष

### लोकतंत्र में हिंसा की जगह नहीं

लोकसभा चुनाव प्रचार का शांतिपूर्ण रहना जितना प्रशंसनीय है, उतना ही निंदनीय है कोलकाता में हुई झड़प और हिंसा। इस लोकसभा चुनाव में ऐसी पहली घटना है जिसमें हिंसा के कारण रोड शो को रोकना पड़ा। केंद्र में सत्तारूढ़ पार्टी के अध्यक्ष अमित शाह का कहना है कि अगर केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल के जवान नहीं होते तो शायद वह जिंदा नहीं लौटते। हो सकता है कि भाजपा का यह बयान राजनीति से प्रेरित हो, लेकिन कोलकाता में हुई हिंसा राज्य सरकार और प्रशासन की संलिप्तता को दर्शाता है। लोकतंत्र में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी बात कहने का हक है, लेकिन हिंसा और सार्वजनिक संपत्तियों को नष्ट करना कहां तक उचित है? नेताओं को अपने अच्छे व्यवहार और विचार से वोट जुटाने का प्रयास करना चाहिए, अपने घोषणा पत्रों के माध्यम से मतदाताओं को आकर्षित करना चाहिए। अलग-अलग राज्यों में राजनीतिक दलों और प्रत्याशियों

**लोकसभा चुनाव के सातवें चरण से पहले कोलकाता में हिंसा की घटनाएं हुई थीं**

ने यही किया है। 19वीं सदी के समाज सुधारक ईश्वर चंद्र विद्यासागर की मूर्ति तोड़े जाने की घटना दुर्भाग्यपूर्ण होने के साथ निंदनीय भी है। राज्य की स्थिति इतनी बिगड़ गई है कि उसमें चुनाव आयोग को हस्तक्षेप करना पड़ा और दो बड़े अधिकारियों को तत्काल प्रभाव से हटाना पड़ा। तृणमूल कांग्रेस शुरुआत से भाजपा को बाहरी बता कर तथा उनके नेताओं की रैलियों को रोक कर अपनी हताशा का सुबूत दिया है। भाजपा कार्यकर्ता प्रियंका शर्मा को मुख्यमंत्री ममता बनर्जी पर बने मीम को शेयर करने की जो सजा मिली, उसकी लोकतंत्र में ऐसी उम्मीद नहीं की जा सकती। देश में अब ऐसी व्यवस्था लागू करने की जरूरत है, जिसमें हिंसा, बंद, हड़ताल और रैली इत्यादि की जिम्मेदारी तय की जाए। राजनीतिक हिंसा या चुनावी हिंसा रोकने के लिए नियम बने।

*दुर्गेश शर्मा, गोरखपुर*

### नेताओं पर बढ़ते आपराधिक मामले

एसोसिएशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (एडीआर) की रिपोर्ट के अनुसार नेताओं पर बढ़ रहे आपराधिक मामले लोकतंत्र के लिए चिंता का विषय है। 2019 के लोकसभा चुनाव को मद्देनजर कराए गए सर्वे के नतीजे बताते हैं कि कुल 7,928 उम्मीदवारों में से 19 प्रतिशत या 1,500 उम्मीदवारों पर आपराधिक मामले दर्ज हैं। इनमें से 1,070 नेताओं पर संगीन आपराधिक मामले दर्ज हैं जिनमें हत्या और बलात्कार जैसी घटनाएं शामिल हैं। सत्तारूढ़ भाजपा के कुल 433 प्रत्याशियों में से 175 प्रत्याशियों पर आपराधिक मामले दर्ज हैं जो पिछले चुनाव के मुकाबले 7 प्रतिशत अधिक है। वहीं कांग्रेस के 124 प्रत्याशियों पर आपराधिक मामले दर्ज हैं जो पिछले चुनाव की तुलना में 16 प्रतिशत अधिक है। वामपंथी दल माकपा में पिछले चुनाव में 35 प्रतिशत उम्मीदवारों पर आपराधिक मामले दर्ज थे जो इस बार बढ़ कर 58 प्रतिशत हो गए। इस समस्या का समाधान उन राजनीतिक पार्टियों को करना चाहिए जो ऐसे दागी उम्मीदवारों को इतनी बड़ी संख्या में चुनावी मैदान में उतारते हैं। हरेक लोकसभा चुनाव में ऐसे उम्मीदवारों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। राजनीति में पारदर्शिता और स्वच्छता बरकरार रखने के लिए संसद में बेदाग छवि वाले राजनेताओं की अत्यंत आवश्यकता है।

**पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।**